विद्या भवन, बालिका विद्यापीठ ,लखीसराय

रूपम कुमारी, वर्ग दशम, विषय-हिन्दी

दिनांक – 17-11-20

|| अध्ययन-सामग्री ||

सुप्रभात बच्चों,

महापर्व छठ की हार्दिक शुभकामनाएं !

हमारी ऊर्जा के स्रोत सूर्य की उपासना ने अपने माता -पिता का यथा सामर्थ्य हाथ बटाएं और आदित्य की कृपा के भागी बनें ।

पठन-पाठन के तहत आज की कक्षा में हम 'साना साना हाथ जोड़ि' यात्रा वृतांत के शेष भाग की चर्चा करेंगे ।

कल की कक्षा में आपने पृष्ठ संख्या 22 ,23 को पढ़ा ।

अब आगे ...

ज़रा भी संतुलन बिगड़े, इंच भर भी जीप इधर-उधर खिसके तो हम सीधे घाटियों में! इन रास्तों पर जगह-जगह लिखी चेतावनियाँ भी हमें खतरों के प्रति सजग कर रही थीं। सामने ही लिखा था–'धीरे चलाएँ, घर में बच्चे आपका इंतज़ार कर रहे हैं।

थोड़ा और आगे बढ़े कि फिर एक चेतावनी–'वी केयर, मैन इटर अराउंड।' पर हमें नरभक्षी जानवर नहीं, दूध देने वाले याक दिखे...काले-काले ढेर सारे याक। पहाड़ों पर गिरती बर्फ़ से प्राकृतिक ढंग से रक्षा करने वाले घने-घने बालों वाले याक।

सूरज ढलने लगा था। हमने देखा कुछ पहाड़ी औरतें गायों को चराकर वापस लौट रही थीं। कुछ के सिर पर लकड़ियों के भारी-भरकम गट्ठर थे। ऊपर आसमान फिर धुंध और बादलों से घिरा हुआ था। उतरती संध्या में जीप अब चाय के बागानों से गुज़र रही थी कि फिर एक दृश्य ने मुझे खींचा...नीचे चाय के हरे-भरे बागानों में कई युवतियाँ बोकु पहने (सिक्किमी परिधान) चाय की पत्तियाँ तोड़ रही थीं। नदी की तरह उफ़ान लेता उनका यौवन और श्रम से दमकता गुलाबी चेहरा। एक युवती ने चटक लाल रंग का बोकु पहन रखा था। सघन हरियाली के बीच चटक लाल रंग डूबते सूरज की स्वर्णिम और सात्विक आभा में कुछ इस कदर इंद्रधनुषी छटा बिखेर रहा था कि मंत्रमुग्ध-सी मैं चीख पड़ी थी!...इतना अधिक सौंदर्य मेरे लिए असह्य था।

यूमथांग पहुँचने के लिए हमें रात भर लायुंग में पड़ाव लेना था। गगनचुंबी पहाड़ों के तल में साँस लेती एक नन्हीं-सी शांत बस्ती लायुंग। सारी दौड़-धूप से दूर ज़िंदगी जहाँ निश्चिंत सो रही थी।

उसी लायुंग में हम ठहरे थे। तिस्ता नदी के तीर पर बसे लकड़ी के एक छोटे-से घर में। मुँह-हाथ धोकर मैं तुरंत ही तिस्ता नदी के किनारे बिखरे पत्थरों पर बैठ गई थी। सामने बहुत ऊपर से बहता झरना नीचे कल-कल बहती तिस्ता में मिल रहा था। मद्धिम-मद्धिम[19] हवा बह रही थी। पेड़-पौधे झूम रहे थे। गहरे बादलों की परत ने चाँद को ढक रखा था...बाहर परिंदे और लोग अपने घरों को लौट रहे थे। वातावरण में अद्‌भुत शांति थी। मंदिर की घंटियों-सी...घुँघरुओं की रुनझुनाहट-सी। आँखें अनायास भर आईं। ज्ञान का नन्हा-सा बोधिसत्व जैसे भीतर उगने लगा...वहीं सुख शांति और सुकून है जहाँ अखंडित संपूर्णता है–पेड़, पौधे, पशु, और आदमी–सब अपनी-अपनी लय, ताल और गति में हैं। हमारी पीढ़ी ने प्रकृति की इस लय, ताल और गति से खिलवाड़ कर अक्षम्य अपराध किया है। हिमालय अब मेरे लिए कविता ही नहीं, दर्शन बन गया था।

19. धीमी, हलकी